देगा, बाहरसे धर्म आता है, कोई कर देता है (ऐसा नहीं है)। कोई किसीका कुछ नहीं करता। प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है। स्वयं स्वतंत्र है। जन्म-मरण में खुद स्वतंत्र है, राग करने में खुद राग करे। छोड़ने में खुद छोड़ता है। कोई किसीका कुछ नहीं कर देता। प्रत्येक आत्मा कोई कर देता है, कोई भगवान कर देता है, वह बात यथार्थ नहीं है। आत्मा पराधीन हो जाये, कोई कर देता हो तो। कोई किसीको मोक्ष में ले जाये और कोई संसार में परिभ्रमण कराये, ऐसा हो। स्वयं स्वतंत्र है। स्वयं राग-द्वेष के कारण, विपरीत मान्यता के कारण जन्म-मरण करता है और स्वयं ही सच्चा ज्ञान करके सम्यग्दर्शन प्राप्त करके स्वयं ही मुक्ति को प्राप्त होता है, मुक्तस्वरूपसे परिणमित होता है।

प्रश्न :- आत्मा का स्वरूप क्या?

समाधान :- आत्मा का स्वरूप-आत्मा जाननेवाला है। उसका मुख्य स्वभाव ज्ञान है। यह शरीर कुछ जानता नहीं, ज्ञान जानता है। अंतर में ज्ञानस्वभावी जानता है। लेकिन इस ज्ञान में अनन्त गुण है। आत्मा में ज्ञान है, आनन्द है, ऐसे अनन्त गुण आत्मा में हैं। जिनके कोई नाम नहीं आते। ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि नाम आते हैं। ज्ञान, दर्शन, चारित्र, बल, प्रभुत्व, विभुत्व ऐसे कोई-कोई नाम आते हैं। ऐसे तो आत्मा में अनन्त गुण हैं। वह आत्मा का स्वभाव है। लेकिन उसे पहिचानने में, जाननेवाला स्वभाव है, जो जाननेवाला है वह आत्मा है, जो जानता है। ये शरीर नहीं जानता। भीतर में जो विकल्प राग-द्वेष होते हैं तो राग कुछ जानता नहीं। उसे जाननेवाला कोई तत्त्व है भीतर में। यह तत्त्व आत्मा है। जिसको जानता है, सुख हुआ, दुःख हुआ, राग हुआ सबको कौन जानता है? जाननेवाला आत्मा है वह जाननेवाला है। जाननेवाला कोई ऐसा उसका स्वभाव है कि अनुपम है-जिसकी उपमा नहीं होती। ऐसा यह जाननेवाला अनन्त को जानता है। ऐसा उसका स्वभाव है। लेकिन राग-द्वेष में एकत्व हो गया है इसलिये उसका जानना कम हो गया, बहुत अल्प हो गया है। लेकिन वह अनन्त को जाने (उसमें) आँख, कान आदि किसीकी ज़रूरत नहीं पड़ती। ऐसा उसका ज्ञान का स्वभाव कोई अद्‌भूत है। लेकिन वीतरागदशा होवे तब वह प्रगट होता है।

भीतर में जो जानता है वह जाननेवाला तत्त्व है वह आत्मा है। उसका नाश नहीं होता। कोई इसका नाश नहीं कर सकता। ऐसा तत्त्व भीतर में है। शरीर कुछ जानता नहीं, हाथ कुछ जानता नहीं, विकल्प राग-द्वेष कुछ नहीं जानते, जाननेवाला अन्दर में है। जाननेवाले को यदि जान ले कि वह आत्मा है। निद्रा में सब जाननेवाला है। क्या हुआ? बचपनसे बड़ा हुआ, उसमें क्या-क्या हुआ उसका ज्ञान करता है वह जाननेवाला आत्मा है। वह जाननेवाला है, उसका स्वभाव है जानने का। भीतर तो उसका आनन्द स्वभाव है, उस आनन्द की कोई उपमा नहीं होती ऐसा आनन्द स्वभाव है। उसका चारित्र स्वभाव है। आत्मा में लीनता करे ऐसा स्वभाव है। बहुत अनन्त-अनन्त स्वभाव है उसका। अनन्त बलवान है, ऐसा स्वभाव

है। बाहर में बल करे (वह नहीं), अन्तर आत्मा में बलवान है। वह आत्मा का स्वभाव है।

पर को जानता है वह जाननेवाला नहीं, स्वयं जाननेवाला है। जो जड़ है, रूप, रस, गन्ध, ऐसा उसका स्वयं स्वभाव है। चैतन्य आत्मा का स्वभाव स्वयं जानने का स्वभाव है। कोई उसका कर्ता नहीं है। स्वयं उसका तत्त्व स्वतःसिद्ध किसीके बनाये बिना सहज ऐसा तत्त्व जाने, जैसे जड़ सहज है, ऐसे आत्मा जाननेवाला सहज तत्त्व है। उसकी जिज्ञासा हो तब वह जानने में आता है। विचार करे तब जानने में आता है। कोई कहता है, आत्मा है ही नहीं। ऐसा नहीं है। आत्मा एक वस्तु है। उसकी स्वानुभूति करनेसे, भीतर में उसको पीछाननेसे उसकी स्वानुभूति होती है। जाननेवाले आत्मा की (स्वानुभूति होती है)।

स्वर्ग-नर्क? स्वर्ग-नर्क है। जैसे परिणाम होते हैं, कोई अच्छा भाव करे, पुण्य के ऐसे-ऐसे अच्छे भाव करे, भगवान का, गुरु की सेवा का, भगवान की पूजा का, शास्त्र पढे ऐसे सब अच्छे भाव करे तो ऐसे अच्छे भाव करनेसे पुण्यबंध होता है। अच्छे भाव करनेसे पुण्यबंध होता है। उसके फल में स्वर्ग मिलता है। जगत में स्वर्ग है। और बहुत ऐसे पाप के भाव करता है तो दुनिया में उसका फल (भोगने को), बहुत पाप करता है तो दुनिया में तो कोई उसको जेल में बन्द करता है, या कोई उसको फाँसी देता है, लेकिन उससे भी बहुत अधिक पाप करता है तो उसका फल कहाँ मिलता है? तो नर्क है। नर्क में उसका फल भोगने को वह जाता है। जीव स्वयं जाता है। नारकी का शरीर मिलता है उसको। नर्क में उसको बहुत दुःख होता है। ऐसी पीड़ा होती है, ऐसी ठण्डी, ऐसी गर्मी, पृथ्वी ऐसी की शरीर का छेद हो जाय, ऐसे नर्क में जाता है। जो बहुत पाप करता है, मांसाहारी होते हैं, वैसे होते हैं वह सब नर्क में जाते हैं। जो अच्छा भाव भगवान का करता है, भले ही समझपूर्वक करे उसकी तो क्या बात? बिना समझे भी भगवान की भक्ति करता है, गुरु की भक्ति करता है तो वह स्वर्ग में जाता है। तो उसको अच्छा स्थान मिला, शरीर अच्छा मिले, बाहर में अनुकूलता मिले, सब अच्छा मिलता है। ऐसा स्वर्ग-नर्क जगत में है। बहुत अच्छा भाव करता है तो जगत में उसका फल भोगने के लिये स्वर्ग है। लेकिन वह भी एक भव है। उसमें भी आयुष्य पूर्ण हो जाता है। आयुष्य पूर्ण होने के बाद जो भाव किये हैं वैसे वह मनुष्य में आता है, कोई तिर्यंच में भी चला जाता है, यदि अच्छे भाव नहीं करे तो। पशु गाय, भैंस, कूत्ता ऐसे-ऐसे पशु में भी चला जाता है। ऐसे भाव करे तो उसमें जाता है, बहुत भाव के भाव करे तो नर्क में जाता है, बहुत पुण्य का करे तो देव में जाता है और ऐसा मध्यम करे तो पशु में जाता है। और उससे भी अच्छे करे तो मनुष्य होता है। मनुष्य में ऐसे भद्रिक परिणाम करे, माया-कपट नहीं करे, ऐसे भद्रिक परिणाम करे तो मनुष्य होता है। ऐसा है, शास्त्र में बहुत आता है।

नर्क, स्वर्ग, तिर्यंच और मनुष्य ये चार गति हैं। फिर आत्मा को पहिचाने, स्वानुभूति

करे तो चारों गतिसे छूट जाता है, फिर उसे गति नहीं मिलती। आत्मा स्वयं आत्मा में लीन होता है, मोक्षगति में (चला जाता है)। फिर तो शरीर भी नहीं मिलता। देव में भी शरीर तो मिलता है। देव में उसको बहुत रत्न मिले, धन, ऐसे-ऐसे महल मिले, यदि उसमें राग हो जाये, एकत्व हो जाये तो फिर पापबंध हो तो पशु में चला जाता है।

मुमुक्षु :- राग और द्वेषसे छूटा कैसे जाये?

समाधान :- आत्मा को पहिचाने तो राग-द्वेष छूट जाये। आत्मा को पहिचाने ये राग-द्वेष मेरा स्वरूप नहीं है, मैं तो आत्मा हूँ, जाननेवाला हूँ, मैं तो ज्ञाता हूँ, ये राग-द्वेष मेरा स्वभाव नहीं है। ऐसे मन्दता करे, पहले तो छूटते नहीं तो उसका भेदज्ञान करे (कि) ये मेरा स्वभाव नहीं है, मैं तो आत्मा हूँ। ये राग-द्वेष हो जाये तो भी उसकी तीव्रता नहीं करे, मन्द हो जाये। मन्दता करे और उसका भेदज्ञान करे कि मैं जाननेवाला हूँ। जाननेवाले का स्वभाव प्रगट होवे तो धीरे-धीरे भेदज्ञान करके यदि स्वरूप में लीन हो जाये और धीरे-धीरे आगे बढ़े तो राग-द्वेष का क्षय हो जाता है। पहले मन्द होते हैं। अशुभभाव होता है, फिर शुभभाव-भगवान के, जिनेन्द्रदेव के, गुरुस्तुति, शास्त्रविचार आदि शुभभाव करे। लेकिन ये शुभ भी मेरा स्वरूप तो नहीं है। सिद्ध भगवान में तो कोई राग नहीं है। ऐसा पुण्यभाव भी नहीं है और पापभाव भी नहीं है। भगवान की भक्ति, गुरुभक्ति बीच में आता है, तो भी आत्मा तो जाननेवाला है। ऐसे आत्मा को यदि पहिचाने तो फिर राग-द्वेष छूट जाते हैं। आत्मा को पहिचाने तो। लेकिन पहले तो पापभाव छूटे, शुभभाव में गुरु क्या कहते हैं, शास्त्र में क्या आता है, ऐसे भाव आते हैं। लेकिन मुझे आत्मा कैसे मिले? ऐसी भावना करते-करते यदि आत्मा को पहिचाने तो सब राग-द्वेष छूट जाते हैं। भेदज्ञान करे तो।

प्रश्न :- दुःख कैसे मिटे?

समाधान :- वही प्रश्न। सुख मिले यदि आत्मा की जिज्ञासा करे तो। ये सब दुःख ही है, ऐसा निर्णय हो कि ये सब दुःख है। संसार में हरजगह दुःख लगे। यहाँ जो सुख लगता है, धनसे सुख, शरीरसे सुख वह सब सुख लगता है, वह सब एक भी सुख नहीं है। कोई सुख नहीं है। दुःख है। शरीर में रोग आये वह भी दुःख है और शरीर निरोग हो वह भी सुख नहीं है, एक भी सुख नहीं है। अन्दर सब में दुःख लगे और आत्मा में ही सुख है, और कहीं नहीं है। देवलोक के देव में भी सुख नहीं है और चक्रवर्ती के राज में भी सुख नहीं है, ऐसा निर्णय हो। और सुख तो आत्मा में ही है, ऐसा निर्णय हो। सुख आत्मा में है और आत्मा को पहिचाने और आत्मा ज्ञायक है ऐसे पहिचानकर उसका भेदज्ञान करे, रागसे भिन्न हो और आत्मा की स्वानुभूति हो तो उसे स्वानुभूति में आत्मा का आनन्द प्रगट होता है और आत्मा का सुख प्राप्त होता है। तो ये राग-द्वेषसे भिन्न होकर, राग-द्वेष में ही दुःख है, उससे भिन्न होवे तो उसे आत्मा की स्वानुभूति हो और आत्मा का आनन्द प्रगट होवे। लेकिन वह आत्मा को पहिचाने, उसकी जिज्ञासा करे,

उसकी महिमा करे। बाहर की महिमा छूट जाये। बाहर धन में या शरीर में कहीं सुख नहीं है। दुःख तो दुःख है, प्रतिकूलता है वह भी दुःख है, लेकिन चक्रवर्ती का राज हो तो भी वह सुख नहीं है, वह भी दुःख है। देवलोक मिले तो वह भी दुःख है। सब में दुःख लगे तो और आत्मा में सुख है ऐसा निर्णय करे तो आत्मा का सुख मिले। कितनों को ऐसा लगता है बाहर की प्रतिकूलता मिले वह तो दुःख है, लेकिन पुण्य मिले वह तो सुख है, ऐसा उसे लगे, लेकिन वह भी सुख नहीं है। वह सुख नहीं है। वह तो कल्पना है। चक्रवर्ती के राज में कोई सुख नहीं है। वह तो कल्पना की है कि ये सब सुख है। उसमें भी सुख नहीं है। सुख तो आत्मा में ही है, ऐसा नक्की करे, ऐसा निर्णय हो, आत्मा को प्राप्त करने का प्रयत्न करे तो आत्मामेंसे सुख हो। नहीं तो अशुभभावसे बचकर शुभभाव होगा। तो उसे अच्छे संयोग मिले, वह सब मिले अर्थात् बाहर का सुख मिले वह सुख नहीं है। अनुकूलता मिले, महल मिले, मकान मिले वह कोई सुख नहीं है। सुख तो आत्मा में है।